परमेश्वर हैं? क्या वह आज की भाषा बोलते हैं? क्या वह आज की समस्याएं और आवश्यकताएं पूर्ति करते हैं? कुछ लोग विगत के संघर्ष में अपना पूरा जीवन बिता देते हैं। वे बदलाव को पुनर्स्थापित करना चाहते हैं, या गत शताब्दी की जागृति, या पेन्टिकोस्टल आन्दोलन या फिर आरम्भिक मण्डली। परमेश्वर मरे हुओं के परमेश्वर नहीं हैं, लेकिन जीवितों के, विगत या भविष्य के परमेश्वर नहीं, पर वर्तमान के। हम प्रत्येक उस सन्त के लिए परमेश्वर की स्तुति करते हैं जो दाऊद की तरह, "अपने पुस्ते की सेवा की और प्रभु में सो गये।" यह हमारी जिम्मेवारी है कि हम अपने पुस्ते की सेवा करें, उनके पुस्ते की नहीं। हम ऐसा ही करेंगे यदि हम स्वयम् वे शब्द सुनने मे समर्थ हैं जो शब्द यीशु ने उस स्त्री से कहे थे - "तुमसे बात करने वाला **मै हूँ।**"

Hindi website: www.growthingod.org.uk/Hindi.htm

English website: www.GrowthInGod.org.uk

Dec 2013

सामरी स्त्री

Jesus and the woman of Samaria.

(१४:६)। "सच्ची दाख लता मैं हूं" (१५:१)। "मैं ने इसलिये जन्म लिया, और इसलिये जगत में आया हूं कि सत्य पर गवाही दूं जो कोई सत्य का है, वह मेरा शब्द सुनता है" (१८:३७)। और पिलातुस का उत्तर के साथ किया गया प्रश्न, 'सत्य क्या है?' इसे हम पाठकों पर छोड़ते हैं कि वे स्वयं इस विषय का अध्ययन करें।

आने वाला मसीह

२५ पद में वह स्त्री अपना ध्यान भविष्य की ओर लगाती है, "मैं जानती हूं कि मसीह जो ख्रीस्तुस कहलाता है, आनेवाला है; जब वह आएगा, तो हमें सब बातें बता देगा।" अधिकांश व्यक्तियों की तरह वह भी विगत से (याकूब का कुंआ) चिपकी हुई थी और भविष्य का सपना देख रही थी।

कुछ हद तक विगत और भविष्य दोनों की ओर एक साथ देखना उचित हो सकता है। यदि परमेश्वर की योजना और उनकी इच्छा जानते हैं तो हम उनकी इच्छा के विपरीत कोई काम नहीं करेंगे, जिन्हें वह तोड़ रहे हैं उन्हें नहीं बनायेंगे, और जिन्हें वह बना रहे हैं उन्हें नहीं तोड़ेंगे। "जहां दर्शन नहीं है, वहां लोग नष्ट होंगे।" यदि वर्तमान में हम परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चलना चाहते हैं तो परमेश्वर के वरदान के रूप में हमें भविष्य दर्शी अन्तर ज्ञान की आवश्यकता है। यह अन्त के दिन की कुछ विशेष शिक्षाओं से मरे तुल्य चिपका रहना नहीं है। यह स्त्री भी आज के बहुसंख्यक लोगों जैसे ही आने वाले मसीह पर दृढ़ विश्वास करती थी, लेकिन यह वह विश्वास नहीं था जिससे उसका जीवन परिवर्तन हुआ हो या जब वह उसके आगे खड़े थे तो उन्हें पहचान पायी हो। उस समय के बहुत लोग जो आने वाले मसीह पर विश्वास करते थे, उसके आने पर उसे क्रूस पर चढ़ा दिया। मुझे लगता है आज भी वही अवस्था है।

यीशु ने उस स्त्री को बलपूर्वक यह कहते हुए भविष्य से वर्तमान में ला दिया, "तुमसे बात करने वाला 'मैं हूं"। यीशु महान् **'मैं हूं'** है - मैं होऊंगा नहीं, मैं था भी नहीं पर **'मैं हूं'**। कम से कम उस स्त्री के लिये प्रकाश का समय अभी था।

यीशु ने उसे अपने आप के विषय में यह प्रकाश दिया, और उसकी प्रतिक्रिया के द्वारा हम समझ सकते हैं कि उसने इसे स्वीकार किया। उसने अपना पुराना घड़ा वहीं छोड़ दिया और गांव लौट गयी ताकि उसके द्वारा अभी अभी ढूंढ़े गये मसीह से और लोगों को भी मिला सके।

इस प्रकार यह स्त्री वर्तमान के प्रकाश में लौट आयी। यहां उस पुरुष या स्त्री के लिये एक परीक्षा है जो परमेश्वर को जानने का दावा करते हैं। क्या वह आज के

क्योंकि वे उस की दृष्टि में मूर्खता की बातें हैं, और न वह उन्हें जान सकता है क्योंकि उन की जांच आत्मिक रीति से होती है" (१ कोरिन्थी २:१४)।

और सत्यता में

'सत्यता में' कहने से यीशु का तात्पर्य क्या था?

सत्यता के लिये उपयोग किया गया यूनानी शब्द αληθεια 'अलेथिया' है जिसका अर्थ 'वास्तविकता' भी होता है। पुराने नियम के बलिदान और रीति सिर्फ छाया थे (हिब्रू ८:५ और १०:१ देखें)। नया नियम वास्तविकता है। कोई भी छाया किसी वास्तविकता का सटीक नकल होता है, लेकिन इसमें कोई सार नहीं होता। किसी चित्र जैसा, इसका अपने आप में कोई मूल्य नहीं होता। यह किसी वास्तविक वस्तु की ओर सिर्फ संकेत करता है। आपके परिवार का चित्र आपकी अनुपस्थिति में कुछ भी नहीं होने से तो अच्छा ही है, लेकिन अपने परिवार के साथ न होने का यह एक कामचलाऊ विकल्प है। यह एक निर्जीव यादगार है। किसी व्यक्ति का चित्र जिससे आप कभी मिले नहीं हैं, उसकी बाहरी छवि के विषय में संकेत कर सकता है, लेकिन जब तक आप उससे आमने सामने नहीं मिलते, आप वास्तव में उसे नहीं जान सकते। अतः पुराना नियम सिर्फ चित्र या तस्वीर था, लेकिन अपने आप में महत्त्वहीन। "क्योंकि अनहोना है, कि बैलों और बकरों का लोहू पापों को दूर करे" (हिब्रू १०:४)। परमेश्वर का निष्कलंक, सत्य मेमना यीशु का लहू, वास्तविकता है।

शारीरिक मन के लिये जो चीजें आंखों से देखी जा सकती हैं, कानों से सुनी जा सकती हैं और हाथों से छुई जा सकती हैं, वे ही वास्तविक हैं। आत्मिक अवस्था छाया की तरह है और अनिश्चय से भरा है। परमेश्वर के लिये ठीक इसके विपरीत है, क्योंकि वे स्वयं आत्मा हैं। आत्मिक चीजें ठोस, स्थायी और वास्तविक हैं। सभी सांसारिक अवस्था संक्रमण कालीन हैं और जब इनका उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा, इनका अन्त हो जायेगा।

सत्यता और वास्तविकता पुराने नियम के बलिदान और रीतियों में निहित नहीं है लेकिन उनके पीछे छिपे -कृश्चियनों द्वारा किये जा रहे उनके नकल में तो और भी नहीं - हुए आत्मिक जगत में।

हम इस विषय को पूरे यूहन्ना के सुसमाचार में उल्लेखित 'सत्य' और 'सत्यता' दो शब्दों को अध्ययन कर आगे बढ़ा सकते हैं। "मेरा मांस वास्तव में खाने की वस्तु है और मेरा लोहू वास्तव में पीने की वस्तु है" (६:५५)। "और सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा" (८:३२)। "यीशु ने उस से कहा, मार्ग और सच्चाई और जीवन मैं ही हूं;"

परिचय

यूहन्ना रचित सुसमाचार के चौथे अध्याय में सामरी स्त्री की जानी पहचानी कहानी उल्लेख किया गया है। धर्म शास्त्र के बहुत से दूसरे भाग जैसे ही, इस कथा में भी ऊपर से जितना दिखता है, उससे कही और अधिक बातें हैं। इसके अन्दर आत्मिक सत्यता और अंतर्ज्ञान का खान है, पर इन्हें देखने के लिये हमारी आंखें खुली होनी चाहिए। सत्यता के मोती उन पदों में भरे पड़े हैं जिन्हें हम सैकड़ों बार पढ़ चुके हैं और लिखे गये शब्दों से अधिक कुछ नहीं देख पाये हैं। इस लेख में मैं और गहराई में जाकर छुपे हुए कुछ बहुमूल्य पत्थर ढूंढना चाहता हूं।

लोगों की गिनती करना

पहले तीन पदों से हम आरम्भ करेंगे। "फिर जब प्रभु को मालूम हुआ, कि फरीसियों ने सुना है, कि यीशु यूहन्ना से अधिक चेले बनाता, और उन्हें बपतिस्मा देता है। (यद्यपि यीशु आप नहीं वरन उसके चेले बपतिस्मा देते थे)। तब यहूदिया को छोड़कर फिर गलील को चला गया" (यूहन्ना ४:१-३)।

फरिसियो की उत्सुकता इस बात में थी कि यीशु के द्वारा बपतिस्मा लेने वालों की संख्या कितनी थी। उनके लिये संख्या महत्त्वपूर्ण था। शरीर की इच्छा के अनुसार चलने वाले व्यक्ति के लिये सेवकाई का बाहरी प्रभाव महत्त्वपूर्ण है। तथ्याङ्क में उसे खुशी मिलती है। कितने लोगों ने उद्धार पाया? कितने लोगों ने मण्डली की सदस्यता ली? क्या कोई नाटकीय चंगाई के काम हुए जिससे अच्छी 'साक्षी' दी जा सके? क्या स्थानीय प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने उत्सुकता दिखाई? और अंत में, कितने लोगों ने बपतिस्मा लिया?

१ इतिहास के २१ अध्याय और उसके पहले पद में हम पढ़ते हैं कि शैतान इस्राएल देश के विरुद्ध खड़ा हुआ और दाऊद को इस्राएलियों की गणना करने के लिये प्रेरित किया। दाऊद इस परीक्षा में पड़ गया जबकि जोआब उसका अधर्मी सेनापति भी जानता था कि ऐसा करना गलत था। दाऊद यह जानना चाहता था कि कितने लोगों को वह सेना में भर्ती कर सकता था जिससे वह अपने सेना की शक्ति के बीच सुरक्षित महसूस कर सके। वह बाबेल के सिद्धान्त पर आगे बढ़ रहा था -"आओ हम अपने लिये एक नगर का निर्माण करें... और अपने लिए एक नाम स्थापित करें... ऐसा न हो

कि हम इधर उधर तितर बितर हो जायें", और नबुकदनस्सर जैसा, "क्या यह महान बेबीलोन नहीं है जिसे मैंने निर्माण किया है"? दाऊद अपने मित्र योनातान के शब्द भूल चुका था, "क्योंकि यहोवा को कुछ रोक नहीं, कि चाहे तो बहुत लोगों के द्वारा चाहे थोड़े लोगों के द्वारा छुटकारा दे। (१ शमूएल १४:६)। वह अपना अनुभव भी भूल चुका था जब वह अकेले फिलिस्तीनी राक्षस गोलियथ को मार गिराया था। इसके फलस्वरूप इस्राएल पर परमेश्वर का दण्ड आया और दाऊद को स्वीकार करना पड़ा, "यह काम जो मैंने किया है, मैंने बहुत बड़ा पाप किया है।"

यूहन्ना के हाथों और यीशु के हाथों बपतिस्मा लेने वालों की संख्या का फरिसी लोग तुलना कर रहे थे। इस परिस्थिति में यीशु की प्रतिक्रिया कैसी थी? इसका उत्तर आश्चर्यजनक पर सरल है। उन्होंने वह जगह छोड़ दी। मुझे इस बात में सन्देह है कि बहुत से आधुनिक प्रचारक ऐसा ही उत्तर सोचते। यदि किसी नगर में उनकी सेवकाई सफलता पूर्वक संचालन हो रहा होता तो स्पर्धा से बचने के लिये वहां से चले जाना क्या ठीक होता? सम्भव है यीशु और उनके चेले पूर्ण रूप से बपतिस्मा देना बन्द कर दिया हो। सुसमाचार की पुस्तकों में उनके इस काम का आगे कोई उल्लेख नहीं मिलता।

यीशु ने उस जगह को क्यों छोड़ दिया? सम्भव है उस जगह के लोग उनकी सेवकाई के लिये अभी तैयार नहीं थे। यह भी सम्भव है कि उन्हें अभी भी यूहन्ना द्वारा दी जा रही बुनियादी शिक्षा की आवश्यकता थी और यीशु के द्वारा दी जा रही शिक्षा वे लोग बाद में स्वीकार करते।

आइये हम दूसरे पद के पैरेन्थेसिस में लिखी गयी बात पर विचार करें। "यीशु स्वयं बपतिस्मा नहीं दे रहे थे पर उनके चेले दे रहे थे"। पौलुस ने भी यही तरीका अपनाया (१ कोरिन्थी १:१४-१७)। न उसे और न यीशु को अपनी प्रतिष्ठा ऊपर करने की आवश्यकता थी, न ही उनकी ऐसी इच्छा थी। दूसरा कोई भी मुख्य स्थान ले सकते थे। किसी व्यक्ति के लिये उसकी सेवकाई का बाहरी प्रभाव अपने प्रशंसक आम जनता के सामने प्रदर्शन करने की तुलना में उसे छुपाना कितनी अच्छी बात है।

आत्मिक समझ

इसलिये यीशु प्रतिष्ठित यहूदिया को छोड़ कर सामरिया के रास्ते गालील की ओर चल दिए। चेले भोजन खरीदने के लिये शहर की ओर गये और यीशु याकुब के कुंए के पास बैठ गये। जब एक गैर यहूदी औरत अकेले पानी लेने कुंए पर आयी तो जिस भीड़ को वे अभी छोड़ कर आये थे, उसकी तुलना में यह दृश्य उतना आकर्षक नहीं था। जब

भविष्य की बात थी, लेकिन जो लोग इसमें प्रवेश कर सकते थे, उनके लिये यह वर्तमान था। इसी प्रकार मेरा विश्वास है कि एक नयी विधि आ रही है और अभी है।

आत्मा में

'आत्मा में' से यीशु का तात्पर्य क्या था?

आत्मा शरीर के विपरीत है। पुराना करार शरीर का करार था। यह एक शारीरिक विधि था जिसमें सब कुछ शारीरिक आंखों से देखी जा सकती थी और शारीरिक मन के लिये स्पष्ट था। इससे सम्बन्धित लोग यहूदी लोग थे जो शरीर अनुसार और लोगों से भिन्न थे। पुराने करार में प्रवेश पाने के लिये किसी यहूदी परिवार में शारीरिक रूप में जन्म लेना पर्याप्त था। नया करार आत्मा में किया गया करार है। आप आत्मिक जन्म के द्वारा प्रवेश पा सकते हैं। "जब तक कोई मनुष्य जल और आत्मा से न जन्मे तो वह परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता"। यह जन्म शारीरिक आंखों से नहीं देखा जा सकता है। यह तो उस हवा के समान है जो, "जिधर चाहती है उधर चलती है, और तू उसका शब्द सुनता है, परन्तु नहीं जानता, कि वह कहां से आती और किधर को जाती है? जो कोई आत्मा से जन्मा है वह ऐसा ही है" (यूहन्ना ३:८)।

पुरानी वाचा के याजक अपने वंश में शारीरिक जन्म के आधार पर अपना कार्य भार पाते थे। सभी उनके विषय में जानते थे कि वे कौन थे। नयी वाचा के याजक आत्मिक याजक हैं, परमेश्वर के द्वारा अभिषेक किये गये, मनुष्य के द्वारा नहीं। उन्हें विशेष वस्त्र या उपाधि के आधार पर नहीं पहचाना जा सकता। सिर्फ कोई आत्मिक व्यक्ति ही उन्हें जान और पहचान सकता है।

पुराना मन्दिर सांसारिक था और प्राकृतिक पत्थरों से निर्माण किया गया था। नया मन्दिर आत्मिक जीवित पत्थरों से बना है, जो किसी प्राकृतिक बन्धन से नहीं पर आश्चर्यजनक परमेश्वर के द्वारा प्रदान किया गया आत्मा की एकता में एक साथ बन्धे हैं। पुराने नियम के पर्व सांसारिक पर्व थे जो विशेष निर्धारित दिनों पर मनाये जाते थे और जिसे लोग आसानी से मनाते थे। नये पर्व आत्मिक अनुभव हैं, जिनका हमें अवश्य आनन्द लेना चाहिये जैसे जैसे पवित्र आत्मा के द्वारा परमेश्वर हमारे मन में इनका - अर्थ प्रकाशित करते हैं। इस विषय पर और जानकारी के किये'इजराइल के पर्व' नामक पुस्तिका पढ़ें।

नये नियम के इनमें से कोई भी महान् आत्मिक सच्चाई स्वाभाविक मन से समझा नहीं जा सकता। "परन्तु शारीरिक मनुष्य परमेश्वर के आत्मा की बातें ग्रहण नहीं करता,

परमेश्वर की इच्छा इन दोनों स्थानों से परे थी। विगत में दोनों ने परमेश्वर का आशीर्वाद चखा था, लेकिन दोनों के समय का अन्त हो रहा था।

यीशु ने जो उत्तर दिया वह क्रान्तिकारी था। शताब्दियों से यरुशलेम सब प्रकार से यहूदियों का धार्मिक और राष्ट्रीय गतिविधि का केन्द्र रहा है, जैसा कि आज भी है। परमेश्वर के आज्ञा से ऐसा हुआ था। यह वह विशेष स्थान है जहां परमेश्वर ने अपना नाम स्थापित करने के लिये चुना था। इसी जगह सभी ईश्वर भक्त यहूदी जो यात्रा करने योग्य थे, परमेश्वर के महान् पर्वों को मनाने वर्ष में तीन बार जाते थे, सिर्फ मानवीय रीति पालन करने नहीं पर ईश्वरीय आज्ञा पालन करने। शताब्दियों से चला आ रहा प्रचलन यीशु अन्त कर रहे थे और इस विधि के अन्त का घोषणा कर रहे थे। "यदि मैं तुझे भूल जाऊं ऐ यरुशलेम, तो मेरा दाया हाथ भी अपना काम भूल जाये"। बेबिलोन के निर्वासन में यहूदियों का यह दुःखद विलाप था। "इस परिस्थिति के लिये सुन्दर, सारे पृथ्वी का आनन्द सियोन पर्वत है —महान् राजा का नगर।" क्या यीशु धर्मशास्त्र जानते थे? हां, वह जानते थे, पर वे उनका आत्मिक अर्थ समझते थे। वह ऊपर से आये थे, और परमेश्वर का वचन बोलते थे, और यह भी जानते थे दृश्य यरुशलेम स्वर्गीय वास्तविकता के छाया से अधिक कुछ नहीं था।

यीशु ने सामरिया और यरुशलेम को एक दूसरे के बराबर नहीं समझा। उन्होंने २२ पद में स्पष्ट कहा, "तुम जिसे नहीं जानते, उसका भजन करते हो; और हम जिसे जानते हैं उसका भजन करते हैं; क्योंकि उद्धार यहूदियों में से है"। इसी प्रकार यदि हम इस मुद्दे को और आगे बढ़ायें तो हम भी सभी सम्प्रदाय को एक समान नहीं समझेंगे, जैसा कि आज बहुत से व्यक्ति सोचते हैं। प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय पवित्र आत्मा के सच्चे काम के फलस्वरूप आरम्भ हुआ क्योंकि बहुत से लोग सत्यता जानने के लिये धर्मशास्त्र में खोज कर रहे थे। मेथोडिस्ट सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव भी परमेश्वर का काम था क्योंकि इसका भ्रष्ट और विश्वास विहीन मण्डली से अलग होना आवश्यक था। ब्रेद्रेन और पेन्टीकौस्टल आन्दोलन दोनों, सत्यता पर विश्वास और अनुभव करने वाले हरेक विश्वासी का अनुग्रह से भरा हुआ आश्चर्यजनक पुनर्स्थापन था जो आरम्भिक मण्डली से विलुप्त हो गया था।

फिर भी यीशु नयी विधि की प्रतीक्षा में थे। "परन्तु वह समय आता है, वरन अब भी है जिस में सच्चे भक्त पिता का भजन आत्मा और सच्चाई से करेंगे, क्योंकि पिता अपने लिये ऐसे ही भजन करने वालों को ढूंढता है। परमेश्वर आत्मा है, और अवश्य है कि उसके भजन करने वाले आत्मा और सच्चाई से भजन करें" (२३, २४)। क्या इस नयी विधि का आगमन हो चुका था? यीशु ने कहा, "एक समय आ रहा है, और अभी है –"। सत्य यह है कि वह समय अभी नहीं आया था, लेकिन पुराने नियम के संतों की तरह जो विश्वास में जीते हैं, वे अपने समय से आगे बढ़ सकते हैं। बहु संख्यक लोगों के लिये यह

उन्होंने उससे पीने के लिये पानी मांगा तब कम से कम दो नियमों का उल्लंघन किया, और एक विशेष बातचीत आरम्भ हो गयी।

धर्मशास्त्र के अन्य भागों की तुलना में जब हम यूहन्ना रचित सुसमाचार पढ़ना आरम्भ करते हैं तो स्वाभाविक ज्ञान से शायद इसे समझ नहीं सकते हैं। वचन के इस भाग के लिये या फिर सम्पूर्ण धर्मशास्त्र के लिये हम यशायाह के इन शब्दों को लेकर प्राक्कथन रख सकते हैं, "क्योंकि यहोवा कहता है, मेरे विचार और तुम्हारे विचार एक समान नहीं है, न तुम्हारी गति और मेरी गति एक सी है। क्योंकि मेरी और तुम्हारी गति में और मेरे और तुम्हारे सोच विचारों में, आकाश और पृथ्वी का अन्तर है" (यशायाह ५५:८,९)। वचन के जिस भाग पर हम विचार कर रहे हैं, वास्तव में ठीक उससे पहले यूहन्ना के ३रे अध्याय के अन्त में इन शब्दों से मिलते जुलते शब्द उल्लेख हैं। "जो ऊपर से आता है, वह सर्वोत्तम है, जो पृथ्वी से आता है वह पृथ्वी का है; और पृथ्वी की ही बातें कहता है: जो स्वर्ग से आता है, वह सब के ऊपर है। जो कुछ उसने देखा, और सुना है, उसी की गवाही देता है; और कोई उस की गवाही ग्रहण नहीं करता। जिसने उस की गवाही ग्रहण कर ली उसने इस बात पर छाप दे दी कि परमेश्वर सच्चा है। क्योंकि जिसे परमेश्वर ने भेजा है, वह परमेश्वर की बातें कहता है: क्योंकि वह आत्मा नाप नाप कर नहीं देता" (यूहन्ना ३:३१-३४)

यीशु ऊपर से आये थे। उनके विचार और वचन परमेश्वर के विचार और वचन थे। हमारा मन उनकी आत्मा की सहायता से जिस हद तक परिवर्तन होगा उसी हद तक हम उनके वचन और काम को समझ सकेंगे। यदि हम मन के परिवर्तन बिना ही धर्मशास्त्र पढ़ने में लगे रहते हैं तो सुसमाचार में प्रायः दोहराये गये ये शब्द हमारे आत्मिक कब्र के पत्थर पर लिखे जायेंगे, "और उनकी बातें वे समझ नहीं पाये।"

यीशु नयी वाचा के मध्यस्थ थे जैसे मूसा पुरानी वाचा का। नयी वाचा वास्तव में स्वर्गीय और आत्मिक वाचा है। पुरानी वाचा मुख्य रूप से सांसारिक और स्वाभाविक स्तर पर काम करती थी। पुराना करार सांसारिक मनुष्य भी समझ सकता था पर नया करार सिर्फ आत्मिक समझ वाले व्यक्ति ही समझ सकते हैं। नयी वाचा में, "अब न कोई यहूदी रहा और न यूनानी; न कोई दास, न स्वतंत्र; न कोई नर, न नारी; क्योंकि तुम सब मसीह यीशु में एक हो" (गलाती ३:२८), जब कि ये दोनों अन्तर पुराने नियम में बहुत ही महत्त्वपूर्ण थे। यीशु ने इस अन्तर को महत्त्व हीन ठहरा दिया जब उन्होंने एक गैर यहूदी स्त्री से आत्मिक जीवन की बातें करना आरम्भ किया। पुराने नियम का स्वाभाविक अन्तर नये नियम में आत्मिक अन्तर को दिखाता है। सच्चे यहूदी वे हैं जो आत्मा में परमेश्वर के लोग हैं, न कि शरीर में।

याकूब का कुंआ

यीशु को हम गेरिजीम पर्वत के पास जो, विगत में बहुत से आत्मिक गतिविधियों से सम्बन्धित था, याकूब के कुंए पर बैठा हुआ पाते हैं। वे उस स्त्री से पानी मांगते हैं और वह आश्चर्यचकित होकर पूछती है, "तू यहूदी हो कर मुझ सामरी स्त्री से पानी क्यों मांगता है?" वह इतने बड़े सांसारिक विभाजन को पाट नहीं सकती है। जब उसने पानी पिलाने से इनकार कर दिया, तब उन्होंने उसे जीवित पानी पिलाने की पेश कस की। इस बार उसने यीशु की बातों पर विश्वास ही नहीं किया, "स्त्री ने उस से कहा, हे प्रभु, तेरे पास जल भरने को तो कुछ है भी नहीं, और कूआं गहिरा है: तो फिर वह जीवन का जल तेरे पास कहां से आया? क्या तू हमारे पिता याकूब से बड़ा है, जिसने हमें यह कूआं दिया?" शारीरिक विचार से आत्मिक विचार की ओर बढ़ना बड़ी बात है, पर वह उनकी बातों का अर्थ नहीं समझ पायी। यीशु ने उसे समझाते हुए कहा, "जो कोई यह जल पीएगा वह फिर प्यासा होगा। परन्तु जो कोई उस जल में से पीएगा जो मैं उसे दूंगा, वह फिर अनन्तकाल तक प्यासा न होगा: वरन जो जल मैं उसे दूंगा, वह **उस में** एक सोता बन जाएगा जो अनन्त जीवन के लिये उमड़ता रहेगा"।

स्त्री और यीशु के शब्दों के बीच कितना सुन्दर विरोधाभास है। वह पुराने नियम के उस पानी की बात करती है जो बहुत नीचे उपलब्ध है और उसे वही लोग निकाल सकते हैं जिनके पास विशेष विधि और बर्तन उपलब्ध हैं, इसके साथ साथ गांव से इतना दूर आना भी पड़ता है। यीशु उस पानी की बात करते हैं जो अंदरूनी है और जो सदा उपलब्ध है। हम कितनी बार भरी दोपहरी में याकूब के कुंए तक की यात्रा कर पानी निकालने के प्रयास में अनगिनत घण्टे व्यर्थ गंवाये हैं और पूरे दिन की आवश्यकता पूरी करने के लिये बाल्टी भर पानी लाये हैं!

१५ वे पद में स्त्री कहती है, "हे प्रभु, वह जल मुझे दे ताकि मैं प्यासी न होऊं और न जल भरने को इतनी दूर आऊं"। शायद यह चल्ताउ उत्तर था, लेकिन यीशु के पास इसका भी प्रत्युत्तर था। "यीशु ने उस से कहा, जा, अपने पति को यहां बुला ला"। स्त्री ने उत्तर दिया, "मेरा कोई पति नहीं है"। "यीशु ने उस से कहा, तू ठीक कहती है कि मैं बिना पति की हूं। क्योंकि तू पांच पति कर चुकी है, और जिस के पास तू अब है वह भी तेरा पति नहीं; यह तू ने सच कहा है"।

इन शब्दों को हम विभिन्न स्तर पर पढ़ सकते हैं। प्रथम स्तर पर ये शब्द उस स्त्री के नैतिक जीवन का खुलासा थे। ये परमेश्वर के सामर्थ्य का प्रदर्शन थे और एक अविश्वासी के लिए एक चिह्न। उसने देखा कि यीशु उसे जानते हैं, यद्यपि वह उन्हें नहीं

जानती। वह मनुष्य के साथ नहीं परन्तु परमेश्वर के साथ बात चित कर रही थी और परमेश्वर उसके साथ। वह अपने आप को नम्र बना कर उनकी बातें सुनने को तैयार हो गयी।

गहरे स्तर पर इन शब्दों के अर्थ वास्तविक अवस्था से बहुत दूर गामी है। यशायाह ने कहा, "तेरा कर्त्ता तेरा पति है" (यशायाह ५४। वह ईर्ष्यालु परमेश्वर हैं और हमें (५: अपने विरोधियों सेबांटना नहीं चाहते। हमें वह अपने स्वयं के लिये चाहते हैं। किसके साथ अथवा किस चीज के साथ आपका विवाह हुआ है? क्या आपके कर्त्ता आपका अविभाजित प्रेम पा रहे हैं? अथवा क्या आपकी मण्डली या आपकी संगति आपके हृदय में पहले स्थान पर है? या आप का विवाह आपके व्यवसाय, आपके काम या आपकी सेवकाई के साथ हुआ है? जब आप परमेश्वर को उनका उचित स्थान देते हैं तो इससे और किसी को कोई कष्ट नहीं होता, बल्कि ऐसा करने से और सभी चीजें अपना ठीक स्थान पाती हैं।

कौन सा सम्प्रदाय

१९ पद में हम उस स्त्री का विवेक पुनर्जीवित हुआ पाते हैं, और इसलिये वह धर्म के विषय में बात करना आरम्भ करती है। "स्त्री ने उस से कहा, हे प्रभु, मुझे ज्ञात होता है कि तू भविष्यद्वक्ता है। हमारे बाप दादों ने इसी पहाड़ पर भजन किया: और तुम कहते हो कि वह जगह जहां भजन करना चाहिए यरूशलेम में है"। हम लोगों ने इसे कितनी बार सुना है। आप किस मण्डली या संगति में जाते हैं, ऐसे विषयों पर अन्तहीन वाद विवाद। उन दिनों में भी यह कोई नयी बात नहीं थी। सामरी लोग शताब्दियों से गेरिजीम पर्वत पर आराधना करते आये थे, जहां वर्षों पहले यहोशू ने इसराइल के लिये आशीषों की घोषणा की थी। यहूदी लोग यरुशलेम में आराधना करते आये थे जहां राजा दाऊद की राजधानी थी और सोलोमन ने मन्दिर का निर्माण किया था। इनमें से किस स्थान को यीशु अपना आशीष देते? वह किसे पवित्र घोषित करते? आप कैथोलिक हैं या प्रोटेस्टेंट? आप किसी परम्परागत मण्डली में जाते हैं कि किसी घरेलू संगति में? आप हमारे पक्ष में हैं कि विपक्ष में? हमें यह जानना आवश्यक है कि आप संगति कहा करते हैं। हमें यह जानना आवश्यक है कि हम आपके साथ सुरक्षित रूप में संगति कर सकते हैं या नहीं।

यीशु ने उसे कैसा उत्तर दिया जरा सुनिये। "हे नारी, मेरी बात की प्रतीति कर कि वह समय आता है कि तुम न तो इस पहाड़ पर पिता का भजन करोगे न यरूशलेम में"।